वर्ष: 2026 | वॉल्यूम: 02 | अंक: 03 | कुल अंक: 04

पौराणिक, पारम्परिक और बौद्धिक कथाओं की त्रिवेणी : शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ

अविनाश शुक्ल
शोधार्थी
बोधकथा शोध संस्थान
शिवलोक, गोरखपुर उ. प्र.
शोध छात्र - हिन्दी विभाग, सिद्धार्थ विश्वविद्यालय, कपिलवस्तु, सिद्धार्थनगर
शोध केन्द्र- जवाहरलाल नेहरू स्मारक पोस्ट ग्रेजुएट कालेज, महाराजगंज, उ. प्र.

सारांश

यह शोध-पत्र शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में निहित पौराणिक, पारम्परिक एवं बौद्धिक तत्वों के समन्वित स्वरूप का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। भारतीय साहित्यिक परम्परा में कथा-साहित्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं रहा, बल्कि वह जीवन-दर्शन, नैतिक मूल्यों और सामाजिक चेतना का संवाहक रहा है। शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ इसी परम्परा को आगे बढ़ाते हुए पौराणिक आख्यानों, लोक-परम्पराओं और आधुनिक बौद्धिक दृष्टि का एक अद्वितीय संगम प्रस्तुत करती हैं।

इन कथाओं में पौराणिक सन्दर्भों के माध्यम से आदर्शों और मूल्यों की स्थापना की गई है, वहीं पारम्परिक तत्वों के द्वारा लोकजीवन, संस्कृति और सामाजिक व्यवहार को अभिव्यक्ति मिली है। साथ ही, बौद्धिक दृष्टिकोण के माध्यम से तर्क, विवेक और आत्मविश्लेषण की भावना को विकसित किया गया है। इस प्रकार, उनकी बोधकथाएँ केवल शिक्षाप्रद ही नहीं, बल्कि बहुआयामी चिंतन को प्रेरित करने वाली भी हैं।

यह अध्ययन इस बात को स्थापित करता है कि शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ पौराणिकता, परम्परा और बौद्धिकता की त्रिवेणी के रूप में भारतीय जीवन-दृष्टि को समग्रता में प्रस्तुत करती हैं। उनकी कथाएँ व्यक्ति के नैतिक, सामाजिक और बौद्धिक विकास के लिए एक सशक्त माध्यम के रूप में कार्य करती हैं।

बीज-शब्द – बोधकथा, पौराणिकता, परम्परा, बौद्धिकता, लोकजीवन, नैतिकता, भारतीय चिंतन, कथा-साहित्य

शोध आलेख – भारतीय साहित्यिक परम्परा में कथा-साहित्य का विशेष महत्त्व रहा है। यहाँ कथा केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि जीवन के गूढ़ सत्यों को सरल, सहज और प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत करने का सशक्त साधन रही हैं। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक समय तक कथाओं के माध्यम से समाज को नैतिक दिशा, सांस्कृतिक पहचान और बौद्धिक चेतना प्रदान की जाती रही है। इसी परम्परा के अंतर्गत शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं, जो पौराणिक, पारम्परिक और बौद्धिक तत्वों का अद्भुत समन्वय प्रस्तुत करती हैं।

शिव नारायण सिंह केवल एक शिक्षक या साहित्यकार ही नहीं, बल्कि एक ऐसे विचारक हैं, जिन्होंने कथा को जीवन-निर्माण का माध्यम बनाया। उनकी बोधकथाएँ विद्यार्थियों और समाज को केवल ज्ञान ही नहीं देतीं, बल्कि उन्हें सोचने, समझने और सही निर्णय लेने की प्रेरणा भी प्रदान करती हैं। उनकी कथाओं की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे बहुआयामी हैं उनमें पौराणिक आदर्शों की गहराई, परम्परा की जड़ें और आधुनिक बौद्धिकता की चेतना तीनों का समन्वय दिखाई देता है।

पौराणिक तत्वों के माध्यम से उनकी कथाएँ भारतीय संस्कृति के मूल आदर्शों धर्म, कर्त्तव्य, सत्य और नैतिकता को प्रस्तुत करती हैं। वे पौराणिक प्रसंगों और पात्रों का उपयोग करके जीवन के आदर्शों को सरल भाषा में समझाते हैं, जिससे स्रोता एवं पाठक उन मूल्यों को सहज रूप से आत्मसात कर सकें।

इसके साथ ही, उनकी कथाओं में पारम्परिक तत्वों की भी स्पष्ट झलक मिलती है। लोकजीवन, ग्रामीण परिवेश, सामाजिक व्यवहार, पारिवारिक सम्बन्ध और सांस्कृतिक मान्यताएँ उनकी कथाओं के अभिन्न अंग हैं। ये तत्व उनकी कथाओं को जमीनी स्तर से जोड़ते हैं और उन्हें अधिक प्रभावशाली एवं जीवन-सापेक्ष बनाते हैं। यहाँ

कहानीकार इस सन्दर्भ में लगभग चित्रकार जैसा हो जाता है, कहानियों में लोक-जीवन के चित्रण को भारत यायावर इन शब्दों में स्पष्ट करते हैं- "मैं किसी भी आदमी, पेड़-पौधा, चिड़िया, जानवर या वस्तु की कल्पना उसके रंग के बगैर नहीं कर सकता। फिर हर चीज़ की एक गन्ध होती है। तो जब मैं लिख रहा होता हूँ तो रंगों और गन्धों के बारे में बताना भी ज़रूरी समझता हूँ। फिर उन रंगों और गन्धों का हमारी इन्द्रियों पर भी प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। वे प्रभाव किस प्रकार के हैं, इसे भी बताना होता है। ध्वनियों का चित्रण एक खास तरह की गीतात्मकता ही नहीं, कथा को गतिमयता में भी बदलता है। जिस तरह हर शब्द की ध्वन्यात्मकता होती है, प्रकृति की हर इकाई, जिसमें सक्रियता या गतिशीलता है, उसकी ध्वनि भी है और हर समय यह ध्वनि एक जैसी नहीं होती है। उसमें बदलाव होता रहता है, मैं जब लिखने बैठता हूँ तो पूरे परिवेश पर मेरा ध्यान होता है। एक असली कथाकार में चित्रकार और संगीतकार की आत्मा भी बैठी होती है।"1 शिव नारायण जी के रचना कौशल पर यह कथन बिल्कुल सटीक बैठता है।

बौद्धिक तत्व उनकी कथाओं का तीसरा और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आयाम है। वे केवल आदर्श प्रस्तुत नहीं करते, बल्कि स्रोता एवं पाठक को सोचने, तर्क करने और आत्मविश्लेषण करने के लिए प्रेरित करते हैं। उनकी कथाएँ प्रश्न उठाती हैं, विचारों को चुनौती देती हैं और व्यक्ति को अपने कर्मों एवं निर्णयों के प्रति सजग बनाती हैं। इस प्रकार, वे केवल भावनात्मक ही नहीं, बल्कि बौद्धिक विकास का भी माध्यम बनती हैं।

आधुनिक युग में, जहाँ भौतिकता, प्रतिस्पर्धा और मूल्य संकट बढ़ता जा रहा है, वहाँ ऐसी कथाओं की आवश्यकता और अधिक बढ़ जाती है, जो व्यक्ति को सन्तुलित जीवन-दृष्टि प्रदान कर सकें। शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ इस आवश्यकता को पूर्ण करती हैं। वे परम्परा और आधुनिकता के बीच एक सेतु का कार्य करती हैं और व्यक्ति को एक समग्र दृष्टिकोण प्रदान करती हैं।

वे अपने विद्यार्थियों से कहते हैं, 'जरा गौर कीजिए, हमेशा आपको दिखाई देता है, यह अभाव है, वह अभाव है, यह नहीं है, वह नहीं है, कुछ भी नहीं है आपके पास। लेकिन ऐसा नहीं है, आपके पास जो कुछ है, जो भी है एक बार सोचकर तो देखिए, क्या आप उसका पूर्णरूप से उपयोग कर रहे हैं? कत्तई नहीं कर रहे हैं, कोई नहीं कर पाता है, लेकिन आपको करना है। जो कर लेता है वही कुछ कर पाता है। आपको ईश्वर ने जितना दिया है, वही इतना अमूल्य है कि उसकी कीमत नहीं आँकी जा सकती। फिर भी आप उसके फेर मे रहते हैं जिसका कोई अर्थ नहीं है ।'' 2

शिव नारायण सिंह का यह विचार दर्शाता है कि मनुष्य प्रायः अपने जीवन में उपलब्ध संसाधनों और क्षमताओं के बजाय उनके अभाव पर अधिक ध्यान केंद्रित करता है, जिसके कारण उसमें असंतोष और हीनता की भावना उत्पन्न होती है। वास्तव में प्रत्येक व्यक्ति को ईश्वर द्वारा प्रदत्त गुण, समय, अवसर एवं संभावनाएँ अत्यन्त मूल्यवान होती हैं, किन्तु उनका समुचित एवं पूर्ण उपयोग विरले ही लोग कर पाते हैं। यह कथन इस तथ्य को रेखांकित करता है कि सफलता का मूल आधार संसाधनों की अधिकता नहीं, बल्कि उपलब्ध साधनों का प्रभावी उपयोग है। अतः मनुष्य को चाहिए कि वह अपने भीतर निहित सामर्थ्य को पहचाने, उसे विकसित करे तथा निरर्थक अभाव-बोध से मुक्त होकर अपने वर्तमान साधनों का अधिकतम सदुपयोग करे, क्योंकि यही दृष्टिकोण उसे वास्तविक प्रगति और संतोष की ओर अग्रसर करता है। भौतिकता एवं पूँजी के बढ़ते प्रभाव के कारण जीवन को भी भौतिक धरातल पर आँका जाने लगा है। मनुष्य अधिक से अधिक संसाधन जुटाने के प्रयास में अपने जीवन मूल्य को निरन्तर ताक पर रखता जा रहा है। यहाँ समाज को शिव नारायण सिंह जैसे साहित्यकारों की आवश्यकता आन पड़ती है, मूल्य-विघटन की ऐसी परिस्थिति में साहित्यकार ही अपने साहित्य के माध्यम से मनुष्य को प्रेरित कर सकता है। डॉ. नत्थूलाल गुप्त 'नवल'के कथनानुसार, "जीवन-मूल्यों के ह्रास एवं विघटन से संत्रस्त इस वर्तमान युग में रचनाकार का यह दायित्व होना चाहिए कि वह पाठकों में जीवन-मूल्यों के प्रति एक सात्विक आस्था जगावे ताकि पाठक अनास्था के कुहासे से निकलकर नवीन प्रकाश में अपनी जीवन-शैली का स्वयं निर्माण कर सके।"3

अंततः, यह कहा जा सकता है कि शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ पौराणिकता, परम्परा और बौद्धिकता की त्रिवेणी के रूप में भारतीय जीवन-दर्शन को एक नई दिशा प्रदान करती हैं। उनकी कथाएँ न केवल शिक्षाप्रद हैं, बल्कि व्यक्ति के नैतिक, सामाजिक और बौद्धिक विकास के लिए

एक सशक्त आधार भी प्रस्तुत करती हैं।

पौराणिक तत्व: आदर्श और नैतिकता –

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में पौराणिक तत्वों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और केंद्रीय स्थान है। वे पौराणिक कथाओं, प्रतीकों, रूपकों और प्रसंगों का अत्यन्त सूक्ष्म एवं प्रभावशाली ढंग से उपयोग करते हुए जीवन के उच्च आदर्शों की स्थापना करते हैं। भारतीय सांस्कृतिक परम्परा में पौराणिक कथाएँ केवल धार्मिक आख्यान नहीं हैं, बल्कि वे मानव जीवन के नैतिक, आध्यात्मिक और दार्शनिक मूल्यों की वाहक रही हैं। धर्म, सत्य, कर्त्तव्य, त्याग, संयम, धैर्य और न्याय जैसे मूल्यों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी संप्रेषित करने में इन कथाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है, और यही परम्परा शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में भी सजीव रूप में दिखाई देती है।

'कर्म में अकर्म' नामक शीर्षक के अंतर्गत पण्डित जी के हाथों अनायास गाय के मृत्यु हो जाने के उपरान्त ग्लानि से भरे पंडित जी स्वयं का दोष अपने हाथों के देवता इन्द्र को देते हुए कहते हैं- ''हाँ, इन्हीं हाथों से मैंने गौ हत्या की है। पर ये हाथ तो मेरे नहीं हैं, इस पर तो इन्द्र का शासन चलता है। यह काम मेरा किया हुआ नहीं है, इन्द्र ने ऐसा करवाया है, इसलिए ऐसा हो गया। इन्द्र जो ब्राह्मण के वेश में थे, उन्होंने कहा- जब इन फूलों को आपने लगाया तब तो ये हाथ आपके थे और जब गौ हत्या हुई, तब ये हाथ इन्द्र के हो गये।

'प्रिय विद्यार्थियों, हमारा, आपका ठीक ऐसा ही स्वभाव है। ब्राह्मण की बात हो रही थी, वह कितनी सही है आप तो समझ ही सकते हैं, लेकिन यह बात पूरी तरह सही है कि आप लोग भी ब्राह्मण की जगह होते तो ऐसा ही कहते। हम होते तो हम भी यही कहते। फूल लगाया, बड़े सुन्दर हैं, बड़े अच्छे हैं, हमने लगाया, अब गौ हत्या हो गई, तो इन्द्र जाने। इन्द्र प्रकट हुए और ब्राह्मण को बात समझ में आ भी गई'।"4

''यही आपका स्वभाव है। जब भी आप कोई कार्य करते हैं और परिणाम बेहतर होता है, अच्छा होता है, तब आप उसका श्रेय स्वयं लेना चाहते हैं। जब बातें बदल जाती हैं, परिणाम पक्ष में नहीं होता है, तब आप कन्नी काटना शुरू कर देते हैं। फिर वहाँ ऐसा नहीं सोचते कि जिसने इस कार्य को करने की प्रेरणा दी है हमें, वह भी कुछ है, उसका भी महत्त्व है, उसका भी इम्पार्टेन्स है और यही कारण है रिजल्ट से आसक्ति होने का। रिजल्ट आता है और अगर वह आपके पक्ष में है, तो आसक्ति हो जाती है। उसे आप अपने से जोड़ लेते हैं, उसका श्रेय आप स्वयं लेना चाहते हैं।"5

इस प्रकार से शिव नारायण सिंह अपने विद्यार्थियों से इतनी गूढ़ बात को कथा के माध्यम से सहज रूप में ग्रहण करा देते है । यह कथा मानव-स्वभाव की उस द्वंद्वात्मक प्रवृत्ति को उद्घाटित करती है, जिसमें व्यक्ति अनुकूल परिणामों का श्रेय स्वयं ग्रहण करता है, किन्तु प्रतिकूल परिस्थितियों में उत्तरदायित्व से विमुख होकर बाह्य शक्तियों को दोषारोपित करता है। पण्डित जी और इन्द्र के संवाद के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि कर्त्तव्यबोध का यह चयनात्मक दृष्टिकोण अहंकार और आसक्ति का द्योतक है। शिव नारायण सिंह अपने विद्यार्थियों को यह शिक्षा देना चाहते हैं कि वास्तविक नैतिकता और आत्मविकास का आधार अपने प्रत्येक कर्म के प्रति उत्तरदायित्व स्वीकार करना तथा परिणामों से अनासक्त रहकर निष्पक्ष भाव से कर्म करना है।

उनकी कथाओं में पौराणिक तत्व केवल कथानक को रोचक बनाने के लिए प्रयुक्त नहीं है , बल्कि वे गहन जीवन-दर्शन और नैतिक संदेशों के संवाहक के रूप में कार्य करते हैं। इन तत्वों के माध्यम से वे यह स्थापित करते हैं कि जीवन की वास्तविक सफलता केवल बाह्य या भौतिक उपलब्धियों पर निर्भर नहीं करती, बल्कि वह व्यक्ति के आचरण, कर्त्तव्य-निष्ठा और नैतिक दृढ़ता पर आधारित होती है। इस प्रकार, उनकी कथाएँ पाठक को यह बोध कराती हैं कि जीवन में उच्च आदर्शों का पालन ही सच्चे अर्थों में सफलता और संतोष का मार्ग है।

'दिग्भ्रमित' नामक कथा राजाभोज, महाकवि कालिदास और एक वृद्धा के माध्यम से जीवन के सत्य को समझाती है। राजा और कालिदास किसी यात्रा के दौरान रास्ता भटक जाते हैं और एक वृद्धा से मार्ग पूछते हैं। वृद्धा सीधे उत्तर देने के बजाय उनसे प्रश्न पूछकर और तर्क के माध्यम से यह समझाती है कि वास्तव में भटकाव केवल रास्ते का नहीं, बल्कि मन और विचारों का होता है।

वृद्धा के संवादों से राजा और कालिदास को अपनी गलती का एहसास होता है। वे समझते हैं कि अहंकार और अज्ञान ही भटकने का कारण हैं। अंत में वे बुढ़िया से क्षमा माँगते हैं और सही मार्ग की ओर अग्रसर होते हैं।

शिव नारायण सिंह कहते हैं, "प्रिय विद्यार्थियों, यह जीवन ही भटकाव है। आपको इसमें से ही रास्ता ढूँढना है, रास्ते का पता लगाना है, रास्ते की खोज करनी है और मंजिल तक पहुँचना है। रास्ता खोजने के समय आप निश्चित ही कुछ न कुछ भ्रमित होते हैं। भ्रम आपको किस बात का होता है? यह आप भलीभाँति जानते हैं। राजा को राजा होने का अहंकार है, कालिदास को विद्वान होने का अहंकार है। क्या आपको कोई अहंकार नहीं है ? आपको तो और ढेर सारा अहंकार है। आप अपने को विद्वान समझते हैं, ज्ञानी समझते हैं, काबिल समझते हैं, सुन्दर समझते हैं, बलवान समझते हैं। यह सब क्या है ? यह सब भी कहीं न कहीं भ्रम है। जो आपके पास नहीं है, उसे आप समझते हैं कि है और जो है उसके बारे में आप सोचते ही नहीं हैं। जब तक यह स्थिति बनी रहेगी तब तक वही हाल रहेगा कि सबके बाद भी बुढ़िया से सबक लेना पड़ा''।6

पौराणिक तत्वों का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष उनकी प्रतीकात्मकता है। शिव नारायण सिंह इन तत्वों का उपयोग इस प्रकार करते हैं कि वे स्रोता और पाठक के भीतर गहरे स्तर पर प्रभाव उत्पन्न करें। उदाहरणत: संघर्षपूर्ण परिस्थितियाँ जीवन की परीक्षा का प्रतीक बन जाती हैं, जबकि आदर्श पात्र नैतिक चेतना के प्रतिनिधि के रूप में उभरते हैं। इस प्रकार, पौराणिक सन्दर्भों के माध्यम से वे जीवन की जटिलताओं को सरल और बोधगम्य बना देते हैं, जिससे स्रोता और पाठक सहज रूप से उनके सन्देश को आत्मसात कर पाता है।

इसके अतिरिक्त, उनकी बोधकथाओं में पौराणिक तत्व आदर्श और यथार्थ के बीच सन्तुलन स्थापित करने का कार्य भी करते हैं। वे यह दर्शाते हैं कि यद्यपि आदर्शों का पालन करना कठिन होता है, फिर भी वही व्यक्ति के चरित्र-निर्माण और व्यक्तित्व-विकास का आधार बनते हैं। कठिन परिस्थितियों में भी सत्य, धर्म और कर्त्तव्य के मार्ग पर बने रहना ही वास्तविक साहस और सफलता का प्रतीक है।

उपरोक्तानुसार शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में पौराणिक तत्व केवल साहित्यिक अलंकरण नहीं हैं, बल्कि वे जीवन-दर्शन के सशक्त माध्यम हैं। इनके माध्यम से वे न केवल भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों को संरक्षित करते हैं, बल्कि उन्हें आधुनिक सन्दर्भ में पुनः स्थापित भी करते हैं। इस प्रकार, उनकी बोधकथाएँ पौराणिकता को एक जीवन्त, प्रासंगिक और प्रेरणादायक रूप में प्रस्तुत करती हैं, जो आज के समय में भी व्यक्ति के नैतिक और आध्यात्मिक विकास के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होती हैं।

पारम्परिक तत्व : लोक जीवन और सांस्कृतिक निरन्तरता–

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में पारम्परिक तत्वों की उपस्थिति अत्यन्त गहरी, व्यापक और अर्थपूर्ण है। उनकी कथाएँ भारतीय लोकजीवन, ग्रामीण परिवेश, सामाजिक सम्बन्धों तथा सांस्कृतिक परम्पराओं का ऐसा सजीव और यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती हैं, जो न केवल स्रोता और पाठक को आकर्षित करता है, बल्कि उसे अपने जीवन और समाज के साथ गहराई से जोड़ता भी है। इन कथाओं में परम्परा केवल अतीत का स्मरण नहीं है, बल्कि वह एक जीवन्त प्रक्रिया के रूप में उपस्थित है, जो वर्तमान जीवन को दिशा प्रदान करती है।

उनकी बोधकथाओं का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष यह है कि वे लोकजीवन को उसकी सम्पूर्ण वास्तविकता के साथ प्रस्तुत करती हैं। गाँव का परिवेश, साधारण मनुष्य का संघर्ष, श्रमशील जीवन, पारिवारिक सम्बन्ध और सामाजिक ताना-बाना ये सभी तत्व उनकी कथाओं में अत्यन्त स्वाभाविक रूप से समाहित हैं। यह यथार्थता कथाओं को कृत्रिम या आदर्शवादी होने से बचाती है और उन्हें जीवन के निकट लाती है, जिससे स्रोता और पाठक स्वयं को उन परिस्थितियों में अनुभव करने लगता है।

पारम्परिक तत्व कथाओं को यथार्थ से जोड़ने का कार्य करते हैं। वे स्रोता और पाठकों को अपने परिवेश, समाज और संस्कृति से पुनः जुड़ने का अवसर प्रदान करते हैं। इन कथाओं में परिवार को एक मूल इकाई के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जहाँ नैतिकता, संवेदना और उत्तरदायित्व का विकास होता है। गुरु-शिष्य सम्बन्ध को विशेष महत्त्व दिया गया है, जो भारतीय शिक्षा परम्परा की आत्मा है। यह सम्बन्ध केवल ज्ञान के आदान-प्रदान तक सीमित नहीं रहता, बल्कि चरित्र-निर्माण और जीवन-दृष्टि के निर्माण का माध्यम बनता है।

'गुरु दक्षिणा' शीर्षक नामक कथा में एक शिष्य के शिक्षा पूरी हो जाने के पश्चात गुरु को दक्षिणा देने हेतु अत्यन्त उत्साहित रहने के कारण उसके गुरु उससे दक्षिणा स्वरूप कोई व्यर्थ वस्तु माँगते हैं। व्यर्थ वस्तु के खोज के क्रम में मिट्टी, कूड़ा तथा गन्दे नाली के पानी को प्रथम दृष्टया व्यर्थ समझना परन्तु पुनः उसकी

उपयोगिता का विचार आता है।

'आप समझ सकते हैं, गुरु ने शिष्य से क्या कहा होगा ? गुरु ने अपने शिष्य से कहा- 'इस दुनिया में वही व्यर्थ है जो दूसरों को व्यर्थ समझता है। इस दुनिया में कोई भी चीज व्यर्थ नहीं है। प्रत्येक चीज का अपना महत्त्व है, जरूरत है उसका उचित मूल्यांकन करने की।

प्रिय विद्यार्थियों, इस घटनाक्रम में आपने देखा कि वह विद्यार्थी व्यर्थ की चीज खोजने में क्या कुछ नहीं बर्बाद करता है। वह व्यर्थ की चीज खोजने में अपना बहुमूल्य समय बर्बाद करता है और इस तरह अपने आपको ही व्यर्थ साबित करता है। क्या आप भी अपने आपको व्यर्थ साबित करना चाहेंगे ? अगर आप भी स्वयं को व्यर्थ साबित करना चाहते हैं, तो कोई बात नहीं। अगर नहीं तो आप क्या करेंगे ? आप समय के महत्त्व को समझेंगे'।"7

इसके अतिरिक्त, उनकी कथाओं में सामाजिक जिम्मेदारी और सामूहिक जीवन के मूल्य भी स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आते हैं। व्यक्ति को केवल अपने लिए नहीं, बल्कि समाज के लिए भी उत्तरदायी बताया गया है। सहयोग, सह-अस्तित्व, पारस्परिक सम्मान और सामूहिक प्रयास जैसे तत्व उनकी कथाओं में बार-बार दिखाई देते हैं, जो एक स्वस्थ और सन्तुलित समाज के निर्माण के लिए आवश्यक हैं। असल में साहित्यकार लोक-कल्याणकारी जीवन-मूल्यों से प्रेरित होकर ही आदर्श साहित्य का सृजन कर सकता है। वीरगाथा काल से आधुनिक युग के साहित्य में लोकहित की यह भावना किसी-न-किसी रूप में विद्यमान है। साहित्य में वर्णित मूल्य किसी वर्ग विशेष के जीवन मूल्य न होकर जनसामान्य के जीवन मूल्य होते हैं। इस सन्दर्भ में बैजनाथ सिंहल जी का कथन है, "मूल्यों को जन-जीवन की व्यावहारिकता में देखने के कारण ही साहित्य मूल्यों को कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के अध्ययन-अध्यापन एवं चर्चा परिचर्चा के सन्दर्भ विशेष से काटकर जन-सामान्य के लिए ज्ञेय बनाता है।"8

इसी कारण साहित्यकार का दायित्व अन्य बुद्धिजीवी वर्ग की तुलना में अधिक गंभीर है। शिव नारायण सिंह अपनी इस साहित्यिक जिम्मेदारी से भली-भाँति परिचित हैं, एक शिक्षक होने के नाते इस कर्त्तव्य का निर्वहन भी उनके लिए कुछ सहज बना मालूम पड़ता है।

शिव नारायण सिंह अपनी कथा 'मेरा क्या बिगड़ता है' में कहते हैं "एक दिन ऐसा हुआ कि एक ओर कुम्हार के बर्तन लदे हुए थे और दूसरी तरफ माली के फूल। माली ऊँट की नकेल, नकेल यानी वह रस्सी जो जानवरों के नाक में लगी रहती है जिसे पकड़कर आगे-आगे चला जाता है, पकड़े हुए था और उसका दोस्त कुम्हार पीछे-पीछे ऊँट को हाँक रहा था। आधे रास्ते में पहुँचते ही ऊँट को भूख लग जाती है, वह पीछे गर्दन घुमा-घुमाकर माली के फूलों को खाने लगता है। माली आगे रहता है। वह सोचता है कि उसका दोस्त पीछे है ही, उसे पीछे मुड़कर देखने की क्या जरूरत है। माली आगे-आगे चलता रहता है और ऊँट पीछे मुड़-मुड़कर माली के फूल खाता रहता है। इधर कुम्हार सोचता है कि ठीक है, ऊँट माली के ही फूल खा रहा है, इससे मेरा क्या बिगड़ता है ? और वह ऊँट को टोकता नहीं है, रोकता नहीं है, मना नहीं करता है। ऊँट फूल खा रहा है, आप समझ रहे होंगे कि क्या घटना घटने वाली है फूल और बर्तनो में एक सन्तुलन है, जिसके कारण ये दोनों सामान ऊँट की पीठ पर रुके हुए हैं। जैसे ही फूल का वजन कम होता है, ऊँट की पीठ पर रखे हुए मिट्टी के बर्तन पलट जाते हैं। फूल का वजन कम हुआ और ऊँट की पीठ पर रखा हुआ सामान पलट गया, नुकसान किसका हुआ यह बताने की जरूरत नहीं है। सारे-के-सारे मिट्टी के बर्तन फूट गये, लेकिन तब भी कुछ फूल तो शेष बच ही गये'।"9

इस कथा के माध्यम से शिव नारायण सिंह सह-अस्तित्व और सन्तुलन की अवधारणा को अत्यन्त सूक्ष्म एवं दार्शनिक स्तर पर प्रतिपादित करते हैं। कुम्हार का "मेरा क्या बिगड़ता है" वाला दृष्टिकोण वस्तुतः सामाजिक उदासीनता, संकीर्ण स्वार्थपरता तथा उत्तरदायित्वहीनता का द्योतक है। यह मानसिकता व्यक्ति को व्यापक सामाजिक संरचना से काटकर केवल अपने तात्कालिक हितों तक सीमित कर देती है।

कथा में ऊँट पर रखे गए फूल और बर्तन केवल भौतिक वस्तुएँ नहीं हैं, बल्कि वे समाज के विभिन्न घटकों के बीच विद्यमान सन्तुलन और परस्पर निर्भरता के प्रतीक हैं। जैसे ही एक पक्ष (फूल) का भार कम होता है, सम्पूर्ण व्यवस्था का सन्तुलन भंग हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप दूसरे पक्ष (बर्तन) का विनाश हो जाता है। यह संकेत करता है कि किसी भी सामाजिक, आर्थिक या नैतिक तंत्र में एक पक्ष की उपेक्षा अंततः समग्र व्यवस्था को संकटग्रस्त कर देती है।

अतः शिव नारायण सिंह यह प्रतिपादित करते हैं कि समाज में प्रत्येक व्यक्ति का दायित्व केवल स्वयं तक सीमित नहीं है, बल्कि वह सामूहिक उत्तरदायित्व का अंग है। यदि व्यक्ति उदासीन रहकर अन्याय, हानि या असन्तुलन को बढ़ने देता है, तो वह अप्रत्यक्ष रूप से उस विनाश का सहभागी बन जाता है, जो अंततः उसे भी प्रभावित करता है। शिव नारायण सिंह समझते हैं कि साहित्यकार साहित्य में केवल कोरे आदर्शों की बातें नहीं कर सकता अपितु उसके विचार एवं अभिव्यक्तियों वास्तविकताओं से परिचालित होना आवश्यक है। डॉ. नत्थूलाल गुप्त नवल के अनुसार, "वही साहित्य वरणीय एवं राष्ट्र की स्थायी निधि हो सकता है जिसकी आत्मा सत्यानुप्राणित हो, जिसके रूप में सहज सौंदर्य और जिसका उद्देश्य बहुजन हित अथवा 'सर्वजन हित' के रूप में शिवत्वमय हो।"10

बौद्धिक तत्व : विवेक और आत्मचिंतन

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं का तीसरा और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण आयाम है—बौद्धिकता, जो उनकी कथाओं को केवल नैतिक या भावनात्मक शिक्षाओं तक सीमित नहीं रहने देती, बल्कि उन्हें एक गहन चिंतनशील और आत्मपरक साहित्यिक रूप प्रदान करती है। उनकी कथाएँ स्रोता और पाठकों को निष्क्रिय रूप से सन्देश ग्रहण करने के लिए प्रेरित नहीं करतीं, बल्कि उन्हें सक्रिय रूप से सोचने, प्रश्न करने, विश्लेषण करने और आत्मचिंतन की प्रक्रिया में संलग्न होने के लिए प्रेरित करती हैं। इस दृष्टि से उनकी बोधकथाएँ बौद्धिक जागरण का एक प्रभावशाली माध्यम बन जाती हैं।

उनकी कथाओं में तर्क और विवेक का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। वे जीवन की ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करते हैं, जहाँ पाठक को स्वतः यह विचार करना पड़ता है कि सही क्या है और गलत क्या है ? इस प्रकार कथाएँ केवल निष्कर्ष नहीं देतीं, बल्कि पाठक को निष्कर्ष तक पहुँचने की प्रक्रिया में शामिल करती हैं। यही प्रक्रिया बौद्धिक विकास का मूल आधार है, क्योंकि इससे व्यक्ति में स्वतंत्र चिंतन की क्षमता विकसित होती है।

अपने विद्यार्थियों को 'तपश्चर्या' नामक कथा के माध्यम से वृक्ष तथा राहगीर के संवाद के द्वारा वृक्ष के फलों से लदे होने के पीछे के संघर्ष का बोध कराते हैं।

"प्रिय विद्यार्थियों, मेरा तो आपसे केवल इतना ही कहना है आपके पास वे सब साधन हैं, सुविधाएँ हैं, परिस्थितियाँ हैं, बस एक इसी की कमी है कि आप तपश्चर्या से भागते हैं। तो जब तक भागेंगे, भागते रह जायेंगे। चूँकि वृक्ष भाग नहीं सका, या यूँ कहूँ कि भाग नहीं सकता, रुक गया, डट गया, लग गया, देखें क्या से क्या हो गया ? आप भी भागें नहीं, रुकें, डटें, तपश्चर्या करें, देखें आप कहाँ नहीं पहुँच जाते हैं। आप जहाँ चाहें पहुँच सकते हैं।"11

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं की एक विशेषता यह भी है कि वे स्रोता और पाठक के भीतर प्रश्नाकुलता को जन्म देती हैं। वे प्रत्यक्ष रूप से उत्तर देने के बजाय अप्रत्यक्ष रूप से ऐसे प्रश्न खड़े करती हैं, जो स्रोता और पाठक को स्वयं अपने जीवन, अपने कर्मों और अपने निर्णयों पर पुनर्विचार करने के लिए प्रेरित करते हैं। यह प्रश्नात्मक शैली व्यक्ति को बाह्य अनुकरण से हटाकर आन्तरिक बोध की ओर ले जाती है।

विनम्रता का पाठ पढ़ाते हुए वे कहते हैं, "पानी सदैव ढाल की तरफ बहता है, हवा सदैव अधिक दाब से कम दाब की ओर बहती है ; तो क्या कुछ पाने के लिए आपको झुकना नहीं पड़ेगा'? "12

उपरोक्त कथन से प्रथम दृष्ट्या, जल का सदैव ऊँचाई से निम्नता की ओर प्रवाहित होना केवल भौतिक नियम नहीं, अपितु एक सांकेतिक प्रतिपादन है, जिसमें "ऊँचाई" अहंकार, दंभ एवं आत्म-अभिमान का द्योतक है, जबकि 'निम्नता' विनम्रता, सरलता तथा ग्रहणशीलता का प्रतीक है। इसी प्रकार, वायु का उच्च दाब से निम्न दाब की ओर गमन भी सन्तुलन स्थापना की स्वाभाविक प्रवृत्ति को इंगित करता है। प्रकृति का यह सन्तुलन-नियम इस तथ्य को पुष्ट करता है कि जहाँ कठोरता, अधिकता या अहं की प्रधानता होती है, वहाँ से प्रवाह उस दिशा में होता है जहाँ रिक्तता, विनम्रता और स्वीकार्यता विद्यमान हो।

दूसरे शब्दों में यह कथन इस सिद्धान्त की पुष्टि करता है कि ज्ञान, अनुभव तथा सफलता का अधिग्रहण केवल उसी व्यक्ति द्वारा सम्भव है, जो स्वयं को विनीत बनाकर नवीनता को ग्रहण करने के लिए तत्पर हो। "झुकना" यहाँ दासता या दुर्बलता का प्रतीक न होकर, आत्म-विस्तार एवं आत्म-उत्कर्ष का माध्यम है। विनम्रता व्यक्ति को न केवल सामाजिक समन्वय प्रदान करती है, बल्कि उसे बौद्धिक और आध्यात्मिक उन्नति के पथ पर अग्रसर भी करती है।

"सिद्धार्थ महात्मा बुद्ध तभी बने जब वे राज-

पाट छोड़ दिये, महल की सारी सुख-सुविधाएँ छोड़ दिये और सामान्य जीवन जीने लगे। भगवान श्रीराम को भी अपनी व्यापकता सिद्ध करने के लिए अयोध्या छोड़नी पड़ी थी'।"13

बौद्धिक तत्वों का एक महत्त्वपूर्ण पहलू आत्मचिंतन है। उनकी कथाएँ व्यक्ति को अपने भीतर झाँकने के लिए प्रेरित करती हैं वह क्या सोचता है ? क्या करता है और क्यों करता है ? यह आत्मविश्लेषण व्यक्ति को अपने गुणों और कमजोरियों को पहचानने में सहायता करता है, जिससे वह अपने व्यक्तित्व का सन्तुलित विकास कर सकता है। इस प्रकार, उनकी बोधकथाएँ केवल ज्ञान प्रदान नहीं करतीं, बल्कि आत्मबोध का मार्ग भी प्रशस्त करती हैं।

"मैं फिर कहता हूँ, आप लोगों में वह सब कुछ है, जो एक मूर्ख को विद्वान् बना सकता है, बीमार को पहलवान बना सकता है, निर्धन को धनवान बना सकता है। अभागे को सौभाग्यशाली, तुच्छ को महान, गुणहीन को गुणवान, पतित को समुन्नत, क्या नहीं बना सकता है ! और कैसे कहूँ कि वह क्षमता है आपमें। फिर भी आप कृपण हैं, कन्टिन्यूटी नहीं है आपमें और थोड़ी-सी ईमानदारी की कमी भी है। एक बार सोचें, विचार करें और दृढ़ निश्चय करें तो निश्चित रूप से आप वह सब कुछ कर सकते हैं जो करना चाहते हैं। उस प्रेत में ऐसा कुछ नहीं था बस यही गुण था उसमें कि वह कृपण नहीं था। उसने जो जिम्मेदारी ली उसे तुरन्त निभाया और जो चाहा सो कर दिया।"14

इसके अतिरिक्त, उनकी कथाएँ निर्णय क्षमता के विकास में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। जीवन में अनेक परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं, जहाँ व्यक्ति को त्वरित और सही निर्णय लेना होता है। उनकी बोधकथाएँ ऐसी ही परिस्थितियों का चित्रण करती हैं, जहाँ स्रोता और पाठक स्वयं को उन स्थितियों में रखकर सोचता है और निर्णय लेने का अभ्यास करता है। यह अभ्यास उसे वास्तविक जीवन में अधिक सजग, सन्तुलित और आत्मविश्वासी बनाता है। बौद्धिक तत्व व्यक्ति को आत्मनिर्भर बनाने में भी सहायक होते हैं। उनकी कथाएँ यह स्पष्ट करती हैं कि जीवन में केवल दूसरों के बताए मार्ग पर चलना पर्याप्त नहीं है, बल्कि व्यक्ति को अपने विवेक के आधार पर निर्णय लेना चाहिए। यह दृष्टिकोण व्यक्ति को स्वतंत्र सोचने और अपने कर्मों की जिम्मेदारी स्वीकार करने के लिए प्रेरित करता है। इस प्रकार, उनकी बोधकथाएँ व्यक्ति को एक जागरूक, उत्तरदायी और आत्मनिर्भर नागरिक बनने की दिशा में अग्रसर करती हैं।

आधुनिक सन्दर्भ में, जहाँ सूचना की अधिकता है लेकिन गहन चिंतन का अभाव है, वहाँ शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ बौद्धिक सन्तुलन स्थापित करने का कार्य करती हैं। वे यह सिखाती हैं कि केवल जानकारी प्राप्त करना पर्याप्त नहीं है, बल्कि उसका विश्लेषण, मूल्यांकन और उचित उपयोग करना भी आवश्यक है।

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं में बौद्धिक तत्व केवल तर्कशीलता का विकास नहीं करते, बल्कि वे व्यक्ति के समग्र मानसिक और चेतन विकास का आधार बनते हैं। उनकी कथाएँ स्रोता और पाठक को विचारशील, आत्मविश्लेषी, विवेकशील और निर्णयक्षम बनाती हैं। इस प्रकार, ये बोधकथाएँ न केवल साहित्यिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं, बल्कि बौद्धिक जागरण और व्यक्तित्व-निर्माण के लिए भी अत्यन्त प्रभावशाली माध्यम सिद्ध होती हैं।

त्रिवेणी का समन्वय: समग्र जीवन-दृष्टि

शिव नारायण सिंह की बोधकथाओं का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वैशिष्ट्य यह है कि उनमें पौराणिकता, परम्परा और बौद्धिकता इन तीनों धाराओं का अद्वितीय एवं सन्तुलित समन्वय दृष्टिगत होता है। यह समन्वय किसी बाह्य संयोजन का परिणाम नहीं है, अपितु एक स्वाभाविक एवं सुसंगत प्रक्रिया है, जो उनकी कथाओं को समग्र जीवन-दृष्टि से संपन्न बनाती है। यदि पौराणिक तत्व उनकी कथाओं को आदर्श और नैतिक आधार प्रदान करते हैं, पारम्परिक तत्व उन्हें सामाजिक यथार्थ और सांस्कृतिक जड़ों से जोड़ते हैं, तो बौद्धिक तत्व उन्हें चिंतनशीलता, तर्कशीलता और आत्मविश्लेषण की दिशा में उन्मुख करते हैं। इन तीनों का समन्वय ही उनकी बोधकथाओं को विशिष्ट एवं प्रभावशाली बनाता है।

पौराणिक तत्वों के माध्यम से वे जीवन के शाश्वत मूल्यों, धर्म, सत्य, कर्त्तव्य और त्याग को स्थापित करते हैं। ये तत्व व्यक्ति को यह बोध कराते हैं कि जीवन का वास्तविक उद्देश्य केवल भौतिक सफलता नहीं, बल्कि नैतिक और आध्यात्मिक उत्कर्ष भी है। दूसरी ओर, पारम्परिक तत्व उनकी कथाओं को जीवन की ठोस भूमि पर स्थापित करते हैं। लोकजीवन, सामाजिक सम्बन्ध, पारिवारिक संरचना और सांस्कृतिक निरन्तरता के माध्यम से वे यह दर्शाते हैं कि व्यक्ति का अस्तित्व समाज से अभिन्न रूप से

जुड़ा हुआ है। इस प्रकार, उनकी कथाएँ आदर्श और यथार्थ के बीच एक सन्तुलित सेतु का निर्माण करती हैं।

बौद्धिक तत्व इस समन्वय को और अधिक सशक्त बनाते हैं। वे स्रोता और पाठक को केवल आदर्शों का अनुकरण करने के लिए प्रेरित नहीं करते, बल्कि उन्हें उन आदर्शों के औचित्य पर विचार करने, उनका विश्लेषण करने और उन्हें अपने जीवन में सार्थक रूप से लागू करने की प्रेरणा देते हैं। इस प्रकार, उनकी कथाएँ अंधानुकरण के स्थान पर विवेकपूर्ण स्वीकृति की भावना को विकसित करती हैं। स्रोता और पाठक केवल 'क्या करना चाहिए' यह नहीं सीखता, बल्कि 'क्यों करना चाहिए' और 'कैसे करना चाहिए' इन प्रश्नों के उत्तर भी खोजने लगता है। शिव नारायण सिंह की कहानियों में मूल्य उन्हें और अधिक प्रेषणीय व प्राणवान बना देते हैं, धर्मवीर भारती के अनुसार, "साहित्य में शब्द तभी समर्थ, प्रेषणीय और प्राणवान बनते हैं, जब उनमें मानवीय मूल्य आन्तरिक रूप से प्रतिष्ठित रहता है।"15

इस त्रिवेणी समन्वय का परिणाम यह होता है कि उनकी बोधकथाएँ व्यक्ति को एक समग्र, सन्तुलित और व्यापक जीवन-दृष्टि प्रदान करती हैं। वे व्यक्ति के नैतिक, सामाजिक और बौद्धिक—तीनों आयामों को एक साथ स्पर्श करती हैं। जहाँ पौराणिकता उसे मूल्यबोध देती है, परम्परा उसे सामाजिक आधार प्रदान करती है, वहीं बौद्धिकता उसे आत्मनिर्भर और विचारशील बनाती है।

निष्कर्ष – अब तो निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि शिव नारायण सिंह की बोधकथाएँ केवल शिक्षाप्रद आख्यान नहीं हैं, बल्कि वे जीवन के विविध आयामों को समाहित करने वाली एक समग्र दार्शनिक दृष्टि का प्रतिपादन करती हैं। पौराणिकता, परम्परा और बौद्धिकता की यह त्रिवेणी न केवल भारतीय सांस्कृतिक चेतना को सुदृढ़ करती है, बल्कि आधुनिक मनुष्य को भी सन्तुलित, सजग और उत्तरदायी जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करती है।

सन्दर्भ सूची–

1. यायावर, भारत: 'रेणु का है अन्दाजें-बयाँ और', राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, नई दिल्ली-02, पहला संस्करण 2014, पृष्ठ संख्या – 20-21
2. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 05 , प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 47
3. डॉ. नत्थूलाल गुप्त नवल, मानव मूल्य, संस्कृति और साहित्य, पृष्ठ संख्या – 52
4. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 76
5. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 77
6. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 82
7. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 05, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 03
8. बैजनाथ सिंहल, साहित्य, मूल्य और प्रयोग, पृष्ठ संख्या – 10
9. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 01, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 15
10. नत्थूलाल गुप्त नवल, मानव मूल्य संस्कृति और साहित्य, पृष्ठ संख्या – 46
11. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 02, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 134
12. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 03, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 220
13. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 03, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 220
14. शिव नारायण सिंह , 'विद्यार्थियों से...' खंड 04, प्रेस्टिज प्रकाशन, पृष्ठ संख्या – 121
15. धर्मवीर भारती ग्रन्थावली सं. चन्द्रकान्त बांदिवडेकर, खण्ड: पाँच, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण: 2009, पृष्ठ संख्या – 274,